76

संविधान की कार्यप्रणाली की समीक्षा करने के लिए राष्ट्रीय आयोग (National Commission to Review the Working of the Constitution)

संविधान की कार्यप्रणाली की समीक्षा करने के लिये एक राष्ट्रीय आयोग की स्थापना वर्ष 2000[1] में भारत सरकार के एक प्रस्ताव के द्वारा की गयी थी। 11 सदस्यीय इस आयोग के अध्यक्ष उच्चतम न्यायालय के भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश[2] एम.एन. वेंकटचलैया थे। इस आयोग ने अपनी रिपोर्ट 2002[3] में सौंप दी थी।

I. आयोग का कार्य

आयोग को पिछले 50 वर्षों के परिप्रेक्ष्य में इस बात की समीक्षा करनी थी कि प्रभावी, दक्ष एवं कार्यकुशल प्रशासन एवं आधुनिक भारत के समाजार्थिक विकास के संबंध में संविधान के वर्तमान उपबंध कहां तक सफल रहे हैं तथा इस संबंध में यदि किसी प्रकार के सुधार की आवश्यकता हो तो वे सुधार किस प्रकार किये जायेंगे। आयोग की स्थापना के समय यह बात पूर्णतया स्पष्ट कर दी गयी थी कि आयोग को अपना काम संविधान के दायरे में रहकर ही करना होगा तथा वह इस प्रकार कार्य करेगा या ऐसी सिफारिशें ही देगा, जिनसे संसदीय लोकतंत्र का ढांचा या संविधान की मूलभूत विशेषताओं में किसी प्रकार का अंतर न आये।

आयोग को यह भी स्पष्ट कर दिया गया था कि उसका काम केवल संविधान की कार्यप्रणाली की समीक्षा करना है तथा उसका काम विशुद्ध सलाहकारी प्रकृति का होगा। उसकी सिफारिशें भारत सरकार पर बाध्यकारी नहीं होंगी। यह संसद पर निर्भर करेगा कि वह आयोग की सिफारिशों को मानता है या उन्हें अस्वीकार कर देता है।

आयोग के सामने कार्य से संबंधित कोई कार्यवृत्त नहीं था। इसने स्वयं ग्यारह ऐसे क्षेत्रों की पहचान की, जिसका उसे अध्ययन करना था एवं उसकी समीक्षा करना था। इसमें निम्न[4] बातें शामिल थीं:

1. संसदीय लोकतंत्र की संस्थाओं को सशक्त बनाना (व्यवस्थापिका, कार्यपालिका एवं न्यायपालिका की कार्यप्रणाली एवं उपादेयता; प्रशासनिक, सामाजिक एवं आर्थिक समस्याओं का राजनीतिक स्थिरता पर प्रभाव; संसदीय लोकतंत्र की अनुशासनात्मक सीमाओं में स्थिरता की संभावनाओं का अन्वेषण)।
2. निर्वाचन सुधार; राजनीतिक जीवन का मानकीकरण।
3. संविधान के अंतर्गत समाजार्थिक परिवर्तन एवं विकास की गति (सामाजिक एवं आर्थिक अधिकारों की सुनिश्चितता: कितनी उचित? कितनी तीव्र? कितनी समान?)।
4. साक्षरता को प्रोत्साहन; रोजगार के अवसर उत्पन्न करना; सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित करना; निर्धनता का उन्मूलन करना।

5. केंद्र-राज्य संबंध।
6. विकेंद्रीकरण एवं अवनति; पंचायती राज संस्थाओं को अधिकारमूलक एवं सशक्त बनाना।
7. मौलिक अधिकारों का विस्तारीकरण।
8. मौलिक कर्तव्यों का प्रभावी क्रियान्वयन।
9. नीति-निदेशक तत्वों का प्रभावी क्रियान्वयन एवं संविधान की प्रस्तावना में वर्णित उद्देश्यों को प्राप्त करना।
10. वित्तीय एवं राजकोषीय नीति पर विधायी नियंत्रण; लोक लेखा प्रचालन।
11. प्रशासकीय तंत्र एवं लोक जीवन में मानकीकरण।

II. संविधान के कार्यकरण के पचास वर्ष

संविधान के 1950 से वर्ष 2000 तक कार्यकरण के बारे में आयोग के निष्कर्ष निम्नानुसार रहे[5]:

स्वतंत्रता के 50 वर्षों के उपरांत हमारी उपलब्धियां एवं असफलतायें क्या रही हैं? लोकतंत्र के तीनों स्तंभों—न्यायपालिका, कार्यपालिका एवं विधायिका ने सामाजिक क्रांति लाने में किस प्रकार की भूमिका का निर्वहन किया है? क्या देश के संस्थापकों ने देश में समाजार्थिक समानता का जो सपना देखा था, वह पूरा हो सका है? यदि हां तो इसके शेष कार्य क्या हैं?

1. राजनीतिक उपलब्धियां

1. भारत का लोकतांत्रिक आधार संघीय राजनीति के आधार पर कार्य करते हुये स्थिर है। 73वें एवं 74वें संविधान संशोधनों से लोकतांत्रिक आधार को और विस्तृतता प्राप्त हुयी है। विकेंद्रीकरण की दिशा में अत्यधिक प्रयास किये गये हैं। आम चुनाव समयानुसार संपन्न होते हैं; एवं चुनावों के आधार पर शक्तियों के हस्तांतरण की प्रक्रिया क्रमबद्ध, शांतिपूर्ण एवं लोकतांत्रिक ढंग से जारी है।
2. संसद एवं राज्य विधानमंडलों के सदस्यों की शैक्षिक योग्यता में काफी सुधार आया है। संसद एवं राज्य विधानमंडल समाज के गठन की दिशा में ज्यादा प्रतिनिधित्वमूलक बने हैं। राजनीतिक क्षेत्र में पिछड़े वर्ग के नेताओं ने नयी उपलब्धियां एवं नये आयाम स्थापित किये हैं।

2. आर्थिक ढांचा-प्रभावी प्रदर्शन

1. उत्पादन में प्रशंसनीय एवं क्रांतिकारी परिवर्तन हुये हैं। नयी तकनीक एवं आधुनिक प्रबंधन तकनीकों का प्रयोग लगातार बढ़ रहा है। विज्ञान, तकनीकी, चिकित्सा, इंजीनिरिंग एवं सूचना तकनीक के क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति हुयी है।
2. 1950-2000 के मध्य कृषि उत्पादन सूचकांक 46.2 से बढ़कर 176.8 हो गया है।
3. 1960-2000 के मध्य गेहूं का उत्पादन 11 मिलियन टन से बढ़कर 75.6 मिलियन टन हो गया है।
4. 1960-2000 के मध्य चावल का उत्पादन 35 मिलियन टन से बढ़कर 89.5 मिलियन टन हो गया है।
5. उद्योग एवं सेवा क्षेत्र का काफी विस्तार हुआ है।
6. औद्योगिक उत्पादन का सूचकांक 1950-51 के 7.9 से बढ़कर 1999-2000 में 154.7 हो गया है।
7. विद्युत उत्पादन 1950-51 के 5.1 बिलियन किलोवाट घंटे से बढ़कर 1999-2000 में 480.7 बिलियन किलोवाट घंटा हो गया है।
8. 1994-2000 के बीच (केवल 1997-98 को छोड़कर) जीएनपी में 6 से 8 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि दर्ज की गयी है।
9. सूचना-प्रौद्योगिकी उद्योग से प्राप्त होने वाला राजस्व 1990 के 150 मिलियन डालर से बढ़कर 1999 में 4 बिलियन डालर हो गया है।
10. भारत का प्रति व्यक्ति सकल राष्ट्रीय उत्पादन 1951 की तुलना में 1999-2000 में 2.75 गुना अधिक था।

3. सामाजिक ढांचा-उपलब्धियां

1. 1950 से 1998 के बीच शिशु मृत्यु दर 146 प्रति हजार से घटकर 72 प्रति हजार रह गयी है।
2. 1950 से वर्ष 2000 तक जीवन प्रत्याशा 32 से बढ़कर 63 वर्ष हो गयी है।
3. आज केरल में जन्म लेने वाला एक बच्चा, वाशिंगटन में जन्म लेने वाले एक बच्चे से ज्यादा लंबे समय तक जीवित रहने की सामर्थ्य रखता है।
4. केरल में महिलाओं की जीवन प्रत्याशा 75 हो चुकी है।
5. भारत ने लोक स्वास्थ्य सेवाओं एवं चिकित्सा नेटवर्क में अत्यधिक उन्नति की है। 1951 में, जहां देश में मात्र

725 प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र थे, 1995 के अंत तक इनकी संख्या बढ़कर 1,50,000 से भी अधिक हो चुकी थी।

6. 1951 से वर्ष 1995 तक देश में प्राथमिक पाठशालाओं की संख्या 2,10,000 से बढ़कर 5,90,000 हो चुकी थी।
7. आज देश के लगभग 95 प्रतिशत गांवों में एक किलोमीटर की परिधि के भीतर प्राथमिक पाठशालाओं की स्थापना की जा चुकी है।

4. राजनीतिक असफलताएं

1. देश में राजनीतिक पतन का सबसे मुख्य कारण निर्वाचन प्रक्रिया का दोषी होना है, जिसमें यह कमी है कि वह आज भी अपराधियों, असामाजिक तत्वों एवं अवांछित लोगों को निर्वाचन में भाग लेने से रोकने में विफल रही है। ऐसे लोग राजनीति में भाग लेकर उसे दूषित करते हैं तथा निर्वाचन एवं संसदीय व्यवस्था को क्षति पहुंचाते हैं।
2. यद्यपि लोकतांत्रिक परंपरायें स्थिरता प्राप्त कर रही हैं तथापि लोकतंत्र को पूर्ण रूपेण सफल नहीं कहा जा सकता है। भारत के अनेकत्व और विविधता को इसके लोकतांत्रिक संस्थानों द्वारा प्रदर्शित नहीं किया गया है, जैसे-सार्वजनिक मामलों एवं नीति-निर्णय में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी। इन प्रक्रियाओं में आज भी महिला-पुरुष अनुपात में काफी असमानता है।
3. निर्वाचन आयोजित करने में अत्यधिक व्यय एवं उसमें व्याप्त भ्रष्टाचार, राष्ट्र के विकास में एक बड़ी बाधा है। ये राजनीतिक एवं लोकतांत्रिक प्रक्रिया को पतनोन्मुख बनाने में भी प्रमुख भूमिका निभा रहे हैं।
4. राजनीतिक दलों में आपराधिक तत्वों की पर्याप्त घुसपैठ एवं प्रभाव है। ये दल धन एकत्र करने के लिये इन आपराधिक छवि वाले लोगों का उपयोग करते हैं। ऐसे लोग धन-बल का प्रयोग करके सार्वजनिक जीवन के मानकों को कम करते हैं तथा स्वच्छ लोकतांत्रिक प्रक्रिया के मार्ग में बाधा उत्पन्न करते हैं। इसका प्रभाव प्रशासन एवं प्रशासनिक प्रक्रियाओं में भी दिखाई देता है।
5. राजनीतिक दलों पर आचार संहिता लागू करने के लिये कोई भी विधिक या कानूनी व्यवस्था नहीं है। उनके धन प्राप्त करने के स्रोत, लेखा-परीक्षा आदि के बारे में भी किसी प्रकार का कानून नहीं है।
6. देश के सभी राष्ट्रीय राजनीतिक दल 'समान राष्ट्रीय उद्देश्यों' के संबंध में भी एकमत नहीं हैं। राजनीतिक दलों का एकमात्र उद्देश्य सत्ता प्राप्ति रह गया है तथा देश के विकास की चिंता किसी को भी नहीं है। ये राजनीतिक दल सत्ता प्राप्ति के लिये किसी भी प्रकार के हथकंडों को अपनाने से नहीं चूकते हैं।
7. भारत के संविधान की प्रस्तावना में 'बंधुत्व' की जो भावना व्यक्त की गयी थी, उसके बारे में कोई भी गंभीरतापूर्वक प्रयास नहीं कर रहा है। स्वतंत्रता के समय की तुलना में आज देश के लोग ज्यादा विभाजित नजर आते हैं।
8. राजनीतिक वातावरण का अपराधीकरण हुआ है तथा शोषण की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। देश में अपराधी-नेता-नौकरशाह गठजोड़ तेजी से बढ़ रहा है।
9. विश्वास का संकट है। नेतृत्व का संकट है। राजनीतिक दलों के संकीर्ण उद्देश्य तथा व्यक्तिगत हित हैं तथा राजनेता अवसरवादी राजनीति करने पर तुले हुये हैं। वे राष्ट्रीय हितों की बजाय व्यक्तिगत हितों को वरीयता देते हैं।

5. आर्थिक असफलतायें

1. देश की आय का 85 प्रतिशत भाग धनी वर्ग के हाथों में जाता है, जिसकी संख्या अत्यंत कम है, जबकि देश की अधिकांश जनसंख्या जो गरीब है, उसके पास देश की आय का 1.5 प्रतिशत हिस्सा आता है। ऊपर से दूसरे, तीसरे और चौथे क्रम के पास क्रमश: आय का 8 प्रतिशत, 35 प्रतिशत और 2 प्रतिशत हिस्सा है।
2. 260 मिलियन से अधिक लोग गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन कर रहे हैं।

6. सामाजिक असफलतायें

1. 1998 में प्रति एक लाख जन्म पर माताओं की मृत्यु दर 407 थी। यह दर पश्चिमी देशों में पायी जाने वाली दर से 100 गुने से भी अधिक है।
2. पांच वर्ष से कम आयु के 53 प्रतिशत (लगभग 60 मिलियन) बच्चे कुपोषण का शिकार हैं। यह उप-सहारा क्षेत्र के अफ्रीकी देशों से भी दोगुना अधिक है।

3. जन्म के समय औसत भार से कम भार वाले बच्चों की संख्या 33 प्रतिशत है। चीन में यह मात्र 9 प्रतिशत, दक्षिण कोरिया में 6 प्रतिशत तथा थाइलैंड एवं इंडोनेशिया में 8 प्रतिशत है।
4. भारत ने 1978 में अल्माटा घोषणापत्र पर हस्ताक्षर किये थे, जिसमें वर्ष 2000 तक 'सभी के लिये स्वास्थ्य' का लक्ष्य निर्धारित किया गया था। 12-13 महीने की आयु के मात्र 43 प्रतिशत बच्चे ही पूर्ण टीकाकरण कार्यक्रम से लाभांवित होते हैं। इनमें से शहरी क्षेत्रों के बच्चों का प्रतिशत 61 एवं ग्रामीण क्षेत्र के बच्चों का प्रतिशत मात्र 37 है। यह बिहार में 11 प्रतिशत एवं राजस्थान में मात्र 17 प्रतिशत है।
5. प्रति व्यक्ति दैनिक खाद्यान्न उपभोग 1950 के 400 ग्राम से थोड़ा बढ़कर 2000 में 440 ग्राम हो गया है। पिछले 50 वर्षों में प्रति व्यक्ति दैनिक दालों के उपभोग में काफी गिरावट आयी है।
6. सामाजिक क्रांति का वादा अभी भी दूर की कौड़ी प्रतीत होता है। देश में 270 मिलियन अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या है। उनके उत्थान एवं विकास संबंधी कार्यक्रमों को गंभीरतापूर्वक लागू नहीं किया गया है।
7. देश में 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों की संख्या 380 मिलियन है। इनमें से लगभग 100 मिलियन दलित बच्चे हैं। इन्हें समाज की मुख्य धारा में लाने के कोई प्रयास नहीं किये गये हैं।
8. उत्तरी राज्यों में जनसंख्या नियत्रण संबंधी उपाय सफल नहीं रहे हैं। उत्तर प्रदेश की जन्म दर को देखने से ज्ञात होता है कि यह राज्य आज भी केरल से लगभग एक शताब्दी पीछे चल रहा है।

7. प्रशासनिक असफलतायें

1. प्रशासन में भ्रष्टाचार, अक्षमता एवं जिम्मेदारी के अभाव से देश में न केवल छद्म कानूनी ढांचा तैयार कर लिया गया है, अपितु समानांतर अर्थव्यवस्था एवं यहां तक की समानांतर सरकार भी चल रही है। प्रशासनिक भ्रष्टाचार से आम आदमी की रोजमर्रा की जिंदगी में हताशा घर कर गयी है तथा इससे अधिकांश लोग अपने कार्यों के लिये गैर-कानूनी उपायों का सहारा लेते हैं। प्रशासनिक भ्रष्टाचार की वजह से लोगों का सरकार एवं संसदीय व्यवस्था से विश्वास उठ गया है।
2. देश में जिम्मेदारी का भावना कम होती जा रही है। भ्रष्टाचार गहराई से अपनी जड़ें जमा चुका है। लोगों के हितों पर कुठाराघात हो रहा है।
3. संविधान के अनुच्छेद 311 के अंतर्गत सेवाओं के संरक्षण का उल्लंघन हो रहा है। बेइमान अधिकारी लोगों का भला करने की जगह अपनी झोली भरने में लगे हुये हैं।

8. लैंगिक समानता एवं न्याय-असफलतायें

1. जीवन प्रत्याशा में क्षेत्रीय असमानता से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि केरल में जन्म लेने वाली महिला, मध्य प्रदेश में जन्म लेने वाली महिला से 18 वर्ष अधिक जीवित रहती है।
2. अधिकांश देशों में पुरुषों की तुलना में महिलाओं की जीवन प्रत्याशा लगभग 5 वर्ष अधिक है। इसी प्रकार विश्व के कई देशों में प्रति हजार पुरुषों पर महिलाओं की संख्या 1005 है। वे देश जहां महिलायें सामाजिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़ी हुयी हैं, प्रति हजार पुरुषों पर महिलाओं की संख्या कम है। भारत में, प्रति हजार पुरुषों पर महिलाओं की संख्या मात्र 933 है। यह 'महिलाओं की विलुप्ति' का संकेतक है।
3. लोक सेवाओं में महिलाओं की भागीदारी मात्र 4.9 प्रतिशत है।
4. 1952 में महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी यह थी कि लोकसभा की कुल 499 सीटों में से मात्र 22 सीटें महिलाओं के पास (मात्र 4.41 प्रतिशत) थीं, वहीं 1991 में लोकसभा की कुल 544 सीटों में से मात्र 49 सीटें महिलाओं के पास (मात्र 9.02 प्रतिशत) थीं।
5. 1999-2000 के बीच उच्च न्यायालय के कुल 503 न्यायाधीशों में से मात्र 15 न्यायाधीश महिलायें थीं।

9. न्याय प्रणाली-असफलतायें

1. न्याय प्रणाली समाज की अपेक्षाओं को पूरा करने में सफल नहीं रही है। इसका धीमापन एवं खर्चीली प्रक्रिया से रोष उत्पन्न होता है। इसकी गति धीमी एवं अनिश्चित है।

2. लोग न्याय के लिये न्यायेत्तर तरीकों को अपनाने के लिये विवश हैं।
3. दीवानी एवं फौजदारी दोनों मामलों की सुनवाई में काफी विलंब होता है।

इस प्रकार कुल मिलाकर सफलताओं की तुलना में असफलतायें ज्यादा नजर आती हैं। संविधान के पचास वर्ष कार्य करते हुये पूर्ण हो चुके हैं, लेकिन इसके कई ऐसे उद्देश्यों को अभी तक नहीं पाया जा सका है, जिनकी संविधान के निर्माण के समय अपेक्षा की गयी थी।

III. चिंता के विषय: आयोग के मत में

आयोग के मतानुसार निम्न विषय ऐसे हैं, जो चिंता का कारण हैं[6]:

1. सरकारों ने संवैधानिक आस्था का मूलत: उल्लंघन किया है और उनकी शासन की पद्धति लोगों की अवहेलना में निहित है, जो कि वस्तुत: राजनीतिक प्राधिकार के अनंतिम स्रोत हैं। लोक सेवक और संस्थान अपनी मूल आवश्यकता लोगों की सेवा के प्रति सजग नहीं हैं। संविधान में परिकल्पित, व्यक्तिगत मर्यादा की प्रतिज्ञा को पूरा नहीं किया जा सका है। इसलिए सरकार और शासन के प्रति आस्था में कमी आई है। नागरिक अपनी सरकारों को अनियंत्रित गतिविधियों में संलिप्त पाते हैं और नागरिक इन संस्थानों में उनकी आस्था खो गई हैं। समाज वर्तमान गतिविधियों के अनुरूप चलने में असमर्थ है।
2. सबसे ज्यादा चिन्ता का विषय भारत की वर्तमान प्रकृति और वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकीय विकासों की गति द्वारा लाए गए परिवर्तनों के आलोक में बड़ी सार्वभौमिक शक्तियों का आकलन करने में इसकी असक्षमता है।
3. चिंता का एक और कारण प्रशासन में बेतहाशा खर्चे और राजकोषीय घाटे का लगातार बढ़ते जाना भी है। 1947 में, राजस्व बजट में जहां 2 करोड़ का घाटा था, 1997-98 में यह बढ़कर 88,937 करोड़ हो गया तथा वर्ष 2002 में यह 1,16,000 करोड़ (जीडीपी का 4. 8 प्रतिशत) के चिंताजनक स्तर तक पहुंच गया। भारत का ऋण बोझ लगातार बढ़ता ही जा रहा है।
4. राजनीतिक माहौल एवं राजनीतिक गतिविधियां दूषित हैं। राजनीतिक अपराधीकरण, राजनीतिक भ्रष्टाचार एवं राजनीतिक-अपराधी-नौकरशाह गठजोड़ काफी उच्च स्तर पर पहुंच चुका है तथा इसे बदलने के लिए सशक्त तंत्रात्मक परिवर्तनों की आवश्यकता है।
5. राष्ट्रीय अखंडता एवं राष्ट्रीय सुरक्षा के प्रश्न को उतना महत्व नहीं दिया गया है, जितना की दिया जाना चाहिये। सामाजिक असंतोष को कम करने वाले प्रयास अनुपस्थित हैं। प्राकृतिक आपदाओं एवं आपदा प्रबंधन के संबंध में न ही पर्याप्त जागरूकता लायी जा सकी और न ही पर्याप्त प्रयास किये गये हैं। प्रशासन द्वारा आगामी घटनाओं एवं अन्य बातों का जो अनुमान लगाया जाता है, उस संबंध में देश की प्रशासनिक व्यवस्था पूरी तरह असफल रही है। सरकार के विभिन्न विभागों के बीच समन्वय एवं सहयोग का अभाव पाया जाता है, जिसकी वजह से सरकारी नीतियां एवं कार्यक्रम सफल नहीं हो पाते हैं। सत्ता एवं शक्ति का दुरुपयोग हो रहा है। उत्तरदायित्व निर्धारित करने का कोई सुनिश्चित कार्यक्रम या योजना नहीं है।
6. यद्यपि देश में एक कार्यरत लोकतंत्र के रूप में लोकतंत्र का रिकॉर्ड एवं अनुभव (कई अभिकेंद्रीय बलों के बावजूद) अच्छा रहा है तथा संविधान के 73वें एवं 74वें संशोधन से इसकी परिचर्चा का दायरा और विस्तृत हुआ है। संविधान संशोधन, संसदीय लोकतंत्र का एक संस्थान के रूप में कार्य करना, ने कई गंभीर कमियों को उजागर किया है, जिनका यदि समय रहते समाधान नहीं किया गया तो यह लोकतांत्रिक मूल्यों के लिए घातक हो सकता है।
7. देश में निर्वाचन तंत्र का दुरुपयोग किया गया है और निर्वाचन व्यवस्था नीति निर्धारक संस्थाओं में ऐसे लोगों को प्रवेश न करने देने में असफल रही है, जो आपराधिक पृष्ठभूमि के हैं।
8. निर्वाचन व्यवस्था की दुर्बलता के कारण संसद एवं राज्य विधानमंडलों में पर्याप्त प्रतिनिधित्व का गुण नहीं दिखाई देता है। 13वीं लोकसभा में कुल मतदाताओं का मात्र 27.9% ही प्रतिनिधित्व रहा। इसी प्रकार उत्तर प्रदेश की विधानसभा में कुल मतदाताओं का मात्र 22.2% ही प्रतिनिधित्व है।
9. निर्वाचित सरकारों की अस्थिरता से अवसरवादी राजनीति एवं सिद्धांतविहीन राजनीति को बढ़ावा मिला है। राजनीतिक स्थायित्व की आर्थिक एवं प्रशासनिक लागत प्रतिकूल ढंग से काफी अधिक है तथा राजनीति पर

इसका प्रभाव सही ढंग से परिलक्षित नहीं होता है। देश के संसदीय इतिहास के कुल 54 वर्षों पर नजर डालें तो ज्ञात होता है कि जहां पहले 40 वर्षों तक केवल 4 प्रधानमंत्रियों ने कार्य किया। इसी तरह 45 वर्षों तक देश में केवल एक ही राजनीतिक दल की सरकार रही, हालांकि 1989 के बाद से देश में अब तक छह बार लोकसभा के निर्वाचन हो चुके हैं। इस राजनीतिक अस्थिरता की कीमत बहुत बृहदकारी है।

10. देश की अर्थव्यवस्था की हालत चिंताजनक है। अर्थव्यवस्था धीरे-धीरे ऋण जाल में फंसती जा रही है। आर्थिक, राजकोषीय एवं मौद्रिक नीतियां, प्रशासनिक अक्षमता एवं भ्रष्टाचार का शिकार हो रही हैं तथा अनुपयोगी खर्चों से समाज में गैर-कानूनी तंत्र का विकास हो रहा है। आपराधिक कार्यों एवं बंदूक की नोक पर अब कई कार्य किये जाने लगे हैं। काला धन, देश में समानांतर अर्थव्यवस्था चला रहा है तथा कुछ ताकतवर लोग समानांतर सरकार की तरह कार्य करके आर्थिक एवं सामाजिक ढांचे को तबाह करने में लगे हैं। आज हमारी सरकार इन सभी चीजों पर अंकुश लगा पाने में स्वयं को असमर्थ पा रही है। इस समय ये सभी प्रवृत्तियां देश को एक विघटन के मार्ग पर ले जा रही हैं।
11. ग्रामीण जनता का पलायन, बढ़ता शहरीकरण, शहरों में लोगों का बढ़ता हुजूम एवं सामाजिक असंतोष इस तरह बढ़ता जा रहा है कि यदि समय रहते इन पर अंकुश न लगाया गया तो स्थिति काबू से बाहर हो जायेगी। बढ़ती बेरोजगारी भी देश के लिये चिंता का एक बड़ा विषय है।
12. समाज का भविष्य ज्ञान आधारित एवं ज्ञान संचालित होता जा रहा है। शिक्षा की गुणवत्ता एवं उच्च शोध के क्षेत्रों में त्वरित सुधार की आवश्यकता है। देश की शिक्षा व्यवस्था किताबी ज्ञान पर आधारित है और इसमें नएपन का अभाव है।
13. देश में न्याय के प्रशासन की व्यवस्था चिंता का एक अन्य क्षेत्र है।
14. आपराधिक न्याय प्रणाली लगभग पंगु बन चुकी है। जांच-पड़ताल एवं अभियोग के क्षेत्र में कई सुधार किये जाने की आवश्यकता है। न्याय मिलने में देरी एवं याचिकाओं की उच्च लागत लोकोक्ति बन गई है। संवेदनशील मामलों में पीड़ितों पीड़ित-संरक्षण और साक्षियों के संरक्षण के मामले में संस्थागत व्यवस्थाओं की आवश्यकता है। अधिवक्ताओं, न्यायाधीशों एवं न्यायिक अधिकारियों की भर्ती एवं प्रशिक्षण प्रणाली में सुधार किया जाना चाहिये और न्यायिक प्रशासकों पर तत्काल ध्यान देने की आवश्यकता है। न्यायालय से परे मध्यस्थ द्वारा न्याय प्राप्त करने के विभिन्न उपायों, यथा-समझौता, माफी आदि सहित अनुषंगी न्यायिक सेवाओं पर अधिक बल देने की आवश्यकता है।
15. धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विविधता वाले भारत जैसे देश में सांप्रदायिक और अन्य अंतर-समूह विवादों को केवल कानून और व्यवस्था की समस्या नहीं माना जा सकता। ये सामूहिक रूप में व्यवहारात्मक अव्यवस्था के संकेतक हैं। अल्पसंख्यकों द्वारा महसूस की जा रही असुरक्षा की भावना को समाप्त करने के लिए विधिक और प्रशासनिक उपायों को किए जाने की आवश्यकता है और अल्पसंख्यकों को राष्ट्रीय मुख्यधारा में लाने की आवश्यकता है।
16. सामाजिक ढांचे की दशा भी अस्त-व्यस्त हो चुकी है। देश में 14 वर्ष से कम आयु के लगभग 380 मिलियन बच्चे हैं। इनकी शिक्षा, स्वास्थ्य एवं अन्य सुविधाएं मात्रात्मक और गुणात्मक दृष्टि से अपर्याप्त हैं। प्राथमिक शिक्षा का 96.4 प्रतिशत धन केवल वेतन-भत्तों में ही खर्च हो जाता है।
17. शिशु मृत्यु दर, अंधत्व, मातृ मृत्यु दर, माताओं में खून की कमी, बच्चों में कुपोषण एवं बच्चों के लिये पर्याप्त टीकाकरण आदि कई ऐसे महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं, जहां विभिन्न प्रयासों के बावजूद भी अभी काफी कुछ किया जाना है।
18. लोक स्वास्थ्य एवं स्वच्छता की ओर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जाता है। टीबी, मलेरिया, हेपेटाइटिस, एचआईवी आदि जैसी कई संक्रामक बीमारियों में वृद्धि हुई है।

IV. आयोग की सिफारिशें

आयोग ने कुल 249 सिफारिशें की हैं। इनमें से 58 सिफारिशें संविधान के संशोधन से संबंधित हैं, 86 विधायिका उपायों से तथा शेष 105 सिफारिशें कार्यपालिका कार्यों से प्राप्त की जा सकती हैं।

आयोग की विभिन्न सिफारिशों का क्षेत्रवार विवरण इस प्रकार है[7]:

1. मौलिक अधिकारों के बारे में

1. विभेद के प्रतिषेध (अनुच्छेद 15 एवं 16 के अंतर्गत) के दायरे में 'प्रजातीय या सामाजिक उद्‌भव, राजनीतिक या अन्य विचार, संपत्ति या जन्म' को भी शामिल किया जाये।
2. विचार एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता (अनुच्छेद 19 के अंतर्गत) को 'प्रेस एवं मीडिया की स्वतंत्रता' तक विस्तृत किया जाये। इसमें विचारों को व्यक्त करने, लेने एवं इस बारे में सूचनायें प्राप्त करने का अधिकार भी लोगों को होना चाहिये।
3. मौलिक अधिकारों में निम्न बातों को शामिल किया जाना चाहिये:
   (क) उत्पीड़न, क्रूरता एवं अमानवीय व्यवहार या दंड के विरुद्ध अधिकार।
   (ख) यदि एक व्यक्ति अवैध तरीके से अपने जीवन या स्वतंत्रता के अधिकार से वंचित किया जाता है तो उसे क्षतिपूर्ति पाने का अधिकार।
   (ग) देश छोड़ने एवं वापस आने का अधिकार।
   (घ) निजता एवं पारिवारिक जीवन का अधिकार।
   (ड.) वर्ष में कम से कम 80 दिनों के लिये ग्रामीणों को रोजगार प्राप्त करने का अधिकार।
   (च) न्यायालय, अधिकरण तक पहुंचने एवं त्वरित न्याय पाने का अधिकार।
   (छ) समान न्याय एवं नि:शुल्क विधिक सहायता पाने का अधिकार।[8]
   (ज) देखभाल, सहायता एवं संरक्षण का अधिकार (बच्चों के मामले में)।
   (झ) शुद्ध पेयजल, प्रदूषणरहित वातावरण, पारिस्थितिकी के संरक्षण एवं सतत विकास का अधिकार।
4. शिक्षा के अधिकार (अनुच्छेद 21-क के अंतर्गत) को इस प्रकार से विस्तृत किया जाना चाहिये- ''प्रत्येक बालक को 14 वर्ष की आयु को प्राप्त करने तक नि:शुल्क शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार होना चाहिये। लड़कियों तथा अनुसूचति जाति एवं जनजाति के मामले में यह सीमा 18 वर्ष तक होनी चाहिये।''
5. निवारक निरोध (अनुच्छेद 22 के अंतर्गत) के संबंध में दो प्रकार के परिवर्तन किये जाने चाहिये। ये हैं-(i) निवारक निरोध की अधिकतम अवधि छह माह होना चाहिये, तथा (ii) परामर्शी बोर्ड में एक अध्यक्ष तथा दो अन्य सदस्य होने चाहिये। ये किसी उच्च न्यायालय के कार्यरत न्यायाधीश होने चाहिये।
6. सिखों, जैनों एवं बौद्धों को हिंदुओं से पृथक माना जाना चाहिये तथा उनको एक साथ मानने वाले उपबंधों (अनुच्छेद 25 के अंतर्गत) को समाप्त कर दिया जाना चाहिये। वर्तमान में, शब्द 'हिंदू' की व्याख्या करते समय इन सभी को शामिल किया जाता है।
7. नौवी अनुसूची में वर्णित अधिनियमों और विनियमों के लिए अनुच्छेद 31-ख द्वारा प्रदत्त न्यायिक समीक्षा से संरक्षण को केवल उन क्षेत्रों तक सीमित किया जाना चाहिए, जो निम्न से संबंधित हों-(i) कृषि सुधार, (ii) आरक्षण, (iii) अनुच्छेद 39 की धारा (ख) या (ग) के अंतर्गत आने वाले नीति निर्देशक तत्वों का कार्यान्वयन।
8. राष्ट्रीय आपातकाल (अनुच्छेद 352 के अंतर्गत) के समय अनुच्छेद 20 एवं 21 के समान ही अनुच्छेद 17, 23, 24, 25 एवं 32 का भी निलंबन नहीं होना चाहिये।

2. संपत्ति के अधिकार के बारे में

अनुच्छेद 300-क का निम्न प्रकार से संशोधन किया जाना चाहिये:

1. संपत्ति से वंचित या अधिग्रहण विधि के प्राधिकार के अनुसार होता है और केवल और लोक प्रयोजन के लिए होना चाहिए।
2. संपत्ति का मनमाने ढंग से वंचन या अधिग्रहण नहीं होना चाहिए।
3. अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के कृषि, वन और गैर-शहरी वास भूमि या पारंपरिक रूप से प्रयुक्त भूमि को वंचित या अधिग्रहण केवल विधि के प्राधिकार अनुसार किया जाएगा, जिसके अंतर्गत ऐसी भूमि के अधिग्रहण से पूर्व उपयुक्त पुनर्वास की योजना है। संक्षेप में, यदि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की भूमि अधिगृहीत की जाती है तो उन्हें 'उपयुक्त पुनर्वास' का अधिकार होना चाहिए।

3. नीति-निदेशक तत्वों के बारे में

1. संविधान के भाग-4 में संशोधन करके उसे 'राज्य नीति एवं कार्य के निदेशक तत्व' नाम दिया जाना चाहिये।

2. जनसंख्या नियंत्रण के बारे में नया निर्देशक तत्व जोड़ा जाना चाहिये।
3. प्रत्येक पांच वर्ष में एक स्वतंत्र राष्ट्रीय शिक्षा आयोग गठित किया जाना चाहिये।
4. सामाजिक सौहार्द एवं सामाजिक दृढ़ता के लिये एक अंतर-आस्था आयोग का गठन किया जाना चाहिये।
5. निदेशक सिद्धांतों के उचित अनुपालन पर नजर रखने के लिये एक उच्चाधिकार प्राप्त समिति का गठन किया जाना चाहिये।
6. पांच वर्ष में एक बार रोजगार के व्यापक अवसरों की खोज करने वाले एक आयोग का गठन करना चाहिये।
7. राष्ट्रीय सांख्यिकी आयोग (2001) की रिपोर्ट में अंतर्विष्ट सिफारिशों को लागू किया जाना चाहिये।

4. मौलिक कर्तव्यों के बारे में

1. मौलिक कर्तव्यों को लोकप्रिय एवं प्रभावी बनाने के लिये उन उपायों एवं साधनों को अपनाया जाना चाहिये, जिनसे इस उद्देश्य की पूर्ति हो सके।
2. मौलिक कर्तव्यों के क्रियान्वयन के संबंध में न्यायाधीश वर्मा समिति की सिफरिशों को यथासंभव[9] लागू किया जाना चाहिये।
3. अनुच्छेद 51-क में निम्न नये मौलिक कर्तव्यों को जोड़ा जाना चाहिये:
   (अ) मत देने का कर्तव्य एवं प्रशासिनिक लोकतांत्रिक प्रक्रिया कर अदायगी के बारे में सक्रिय रूप से भागीदारी निभाने का कर्तव्य।
   (ब) बच्चों को पारिवारिक मूल्यों से परिचित कराने एवं उन्हें शैक्षिक, शारीरिक एवं नैतिक शिक्षा देने का कर्तव्य।
   (स) औद्योगिक प्रतिष्ठानों को अपने कर्मचारियों के बच्चों के लिये शिक्षा की व्यवस्था करने का कर्तव्य।

5. संसद एवं राज्य विधानमंडलों के बारे में

1. सांसदों एवं विधायकों के विशेषाधिकारों को परिभाषित और विसीमित किया जाना चाहिये ताकि संसद और राज्य विधानमण्डलों का निष्पक्ष और स्वतंत्र कार्यकरण सुनिश्चित किया जा सके।
2. अनुच्छेद 105 को यह स्पष्ट करने के लिए संशोधित किया जाना चाहिए कि संसदीय विशेषाधिकारों के अंतर्गत सदस्यों को प्राप्त उन्मुक्तियों में उनके द्वारा सभा या अन्यथा में अपने कर्तव्यों के निर्वहन के संबंध में किए गए भ्रष्ट कृत्यों को सम्मिलित नहीं किया जाएगा। इसके अतिरिक्त कोई भी न्यायालय अध्यक्ष/सभापति की स्वीकृति के बिना किसी सदस्य द्वारा की गई कार्यवाही से उत्पन्न किसी अपराध को संज्ञान में नहीं लेगा। राज्य विधानमंडलों के सदस्यों के बारे में अनुच्छेद 194 को भी इसी प्रकार संशोधित किया जाना चाहिये।
3. किसी व्यक्ति को राज्यसभा का चुनाव लड़ने के लिये यह योग्यता होनी चाहिये कि वह जिस राज्य से चुनाव लड़ रहा है, उसे उसी राज्य का निवासी होना चाहिये। यह राज्यसभा की संघीय प्रवृत्ति को बनाये रखने के लिये आवश्यक है।
4. सांसद स्थानीय विकास योजना को समाप्त कर दिया जाना चाहिये।
5. देश के निर्वाचन आयोग को यह अधिकार होना चाहिये कि वह केंद्र एवं राज्य सरकार में पदों को 'लाभ के दायरे वाला' वाला निर्धारित कर सके।
6. राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के बारे में एक केन्द्रीय स्थायी समिति का गठन करने के लिये त्वरित उपाय किये जाने चाहिये।
7. संविधान संशोधन के प्रस्तावों की जांच एवं छंटाई के लिये संसद के दोनों सदनों की एक स्थायी संविधान समिति बनायी जानी चाहिये।
8. व्यवस्थापिका योजनाओं के क्रियान्वयन एवं निरीक्षण के लिये संसद की नयी विधायी समिति गठित की जानी चाहिये।
9. संसद की वर्तमान प्राक्कलन समिति, लोक उपक्रम एवं अधीनस्थ विधान समितियों को समाप्त कर दिया जाना चाहिये।
10. संसदों को स्वयं इस बात का प्रयास करना चाहिये कि उन्हें भी संसदीय लोकपाल के दायरे में लाने के लिये उचित नियम बनाये जायें।
11. जिन विधानसभाओं में 70 से कम सदस्य हैं, उन्हें एक वर्ष में कम से कम 50 दिन अवश्य आयोजित होना

चाहिये। अन्य विधानसभाओं के लिये यह अवधि कम से कम 90 दिन की होनी चाहिये। इसी प्रकार राज्य सभा और लोकसभा की एक वर्ष के दौरान न्यूनतम बैठकों की संख्या क्रमशः 100 और 120 दिन होनी चाहिए।

12. प्रक्रिया संबधी सुधारों के लिये संसद के बाहर एक अध्ययन दल बनाया जाना चाहिये।

6. कार्यपालिका एवं प्रशासन के बारे में

1. संसद में किसी भी दल को पूर्ण बहुमत न मिलने की स्थिति में लोकसभा सदन के नेता का चुनाव कर सकती है। बाद में उसे राष्ट्रपति द्वारा प्रधानमंत्री नियुक्त किया जा सकता है। ठीक इसी प्रकार की प्रक्रिया राज्यों में भी अपनायी जा सकती है।
2. एक प्रधानमंत्री के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव के समय एक वैकल्पिक नेता के लिये भी मतदान होना चाहिये। इसे 'अविश्वास के लिये रचनात्मक मत व्यवस्था' कहा जाता है।
3. जब सरकार के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव लाया जाता है तो इसके लिये सदन के कुल सदस्यों में से कम से कम 20 प्रतिशत सदस्यों को इसका नोटिस देना चाहिये।
4. मंत्रिपरिषद के विशाल आकार को विधि द्वारा सीमित किया जाना चाहिये। किसी भी राज्य या केंद्र सरकार में मंत्रियों की कुल संख्या सदन की कुल सदस्य संख्या का 10 प्रतिशत तक सीमित कर दिया जाना चाहिये।
5. विभिन्न प्रकार के अनावश्यक मंत्रालयों/विभागों का गठन तथा उनके लिये लोगों को नियुक्त कर मंत्रियों के समान दर्जा देने एवं उन्हें मंत्रियों के समान वेतन-भत्ते आदि देने की प्रथा को हतोत्साहित करना चाहिये। इनकी संख्या निचले सदन की कुल संख्या का मात्र 2 प्रतिशत होना चाहिये।
6. संविधान के द्वारा लोकपाल की नियुक्ति करनी चाहिए और प्रधानमंत्री को इसके क्षेत्राधिकार से बाहर रखना चाहिए और राज्यों में लोकायुक्त का गठन किया जाना चाहिये।
7. संयुक्त सचिव से ऊपर के स्तर पर सरकारी पदों पर पार्श्व भर्ती की अनुमति दी जानी चाहिये।
8. अनुच्छेद 311 का संशोधन कर यह सुनिश्चित करना चाहिये कि ईमानदार सरकारी सेवकों को संरक्षण मिले एवं भ्रष्ट सरकारी सेवकों को दंडित किया जाये।
9. कार्मिक नीतियों के प्रश्न, जिसमें भर्ती, पदोन्नति, स्थानांतरण एवं फास्ट ट्रैक एडवांसमेंट आदि शामिल हैं, का संचालन एवं प्रबंधन एक स्वायत्त लोक सेवा बोर्ड के द्वारा किया जाना चाहिये। इस बोर्ड का गठन सांविधिक उपबंधों के अंतर्गत किया जाना चाहिए।
10. सरकारी सेवकों एवं अधिकारियों को अपना पद संभालने से पूर्व संविधान के प्रति निष्ठा के साथ ही अच्छा प्रशासन देने की शपथ लेनी चाहिये।
11. सूचना के अधिकार की गारंटी होनी चाहिये तथा गोपनीयता की शपथ के स्थान पर पारदर्शिता की शपथ दिलायी जानी चाहिये।
12. लोक हित अनावरण अधिनियम (जिसे व्हिसल-ब्लोअर अधिनियम के नाम से जाना जाता है) को भ्रष्टाचार एवं कुप्रशासन के विरुद्ध उपयोग में लाया जाना चाहिये।
13. भ्रष्ट सरकारी सेवकों सहित गैर-सरकारी सेवकों द्वारा बेनामी संपत्ति खरीदने को रोकना चाहिये तथा इसके लिये उचित कानून बनाना चाहिये।

7. केंद्र-राज्य एवं अंतरराज्यीय संबंधों के बारे में

1. 1990 के अंतराज्यीय परिषद आदर्श को उन मामलों को बिल्कुल स्पष्ट करना चाहिये, जो परामर्श का भाग होंगे।
2. आपदा एवं आपातकाल का प्रबंधन (प्राकृतिक एवं मानव निर्मित दोनों) दोनों को संविधान की सातवीं अनुसूची की सूची-III (समवर्ती सूची) में शामिल किया जाना चाहिये।
3. एक सांविधिक निकाय, जिसे अंतरराज्यीय व्यापार एवं वाणिज्य आयोग के नाम से जाना जायेगा, का गठन किया जाये।
4. राष्ट्रपति द्वारा किसी राज्य में राज्यपाल की नियुक्ति संबंधित राज्य के मुख्यमंत्री से परामर्श के उपरांत ही की जानी चाहिये।
5. अनुच्छेद 356 को समाप्त नहीं किया जाना चाहिये। लेकिन इसका उपयोग तभी करना चाहिये, जब कोई विकल्प न बचा हो।

6. किसी राज्य में किसी सरकार द्वारा विधामंडल का विश्वास खो देने या नहीं का परीक्षण केवल सभा में ही किया जाना चाहिए। राज्यपाल को इस बात की अनुमति नहीं होनी चाहिये कि वह राज्य सरकार को विघटित कर सके, जब तक कि उसे सभा का विश्वास प्राप्त हो।
7. यदि राज्य में आपातकाल की घोषणा न भी हो, यदि निर्वाचन नहीं होते हैं तो राष्ट्रपति शासन जारी रखा जा सकता है। इसे सुनिश्चित करने के लिए अनुच्छेद 356 में संशोधन किया जाना चाहिए।
8. अनुच्छेद 356 के लागू होने के बाद भी राज्यविधानसभा को तब तक विद्यटित न किया जाये, जब तक कि संसद में इसका अनुमोदन न हो जाये। यह सुनिश्चित करने के लिये अनुच्छेद 356 में आवश्यक संशोधन किये जाने चाहिये।
9. राज्यों एवं राज्य तथा केंद्र के बीच नदी जल विवाद के मामले की सुनवाई कम से कम तीन न्यायाधीशों वाली खंडपीठ द्वारा ही की जानी चाहिये। यदि आवश्यक हो तो इस बारे में उच्चतम न्यायालय के पांच न्यायाधीशों से बनी पीठ इसका अंतिम निर्णय करे।
10. संसद को चाहिये कि वह सभी राज्यों से विचार-विमर्श करके 1956 के नदी बोर्ड अधिनियम के स्थान पर कोई नया अधिनियम बनाये।
11. जब राज्य का कोई विधेयक राष्ट्रपति के विचारार्थ आरक्षित होता है तो इसके लिये एक निश्चित समयावधि (मान लीजिए तीन माह) तय की जानी चाहिये। इस समयावधि में यह तय हो जाना चाहिये कि राष्ट्रपति इस विधेयक को मंजरी देगा या नहीं।

8. न्यायपालिका के बारे में

1. न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिये संविधान के अंतर्गत एक राष्ट्रीय न्यायिक आयोग का गठन किया जाना चाहिये। इसमें भारत के मुख्य न्यायाधीश (अध्यक्ष के रूप में), उच्चतम न्यायालय के दो वरिष्ठ न्यायाधीश, केंद्रीय विधि मंत्री एवं तथा राष्ट्रपति द्वारा नामनिर्देशित एक व्यक्ति होना चाहिये।
2. राष्ट्रीय न्यायिक आयोग की एक समिति द्वारा उच्चतम न्यायालय एवं उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के आचरण की जांच की जानी चाहिये।
3. उच्च न्यायालय एवं उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की सेवानिवृत्ति की आयु क्रमश: 65 वर्ष एवं 68 वर्ष होनी चाहिये।
4. उच्च न्यायालय एवं उच्चतम न्यायालय के अलावा किसी अन्य न्यायालय को अपनी अवमानना के आरोपी को दंडित करने का अधिकार नहीं होना चाहिये।
5. उच्च न्यायालय एवं उच्चतम न्यायालय के अलावा किसी अन्य न्यायालय को यह अधिकार नहीं होना चाहिये कि वह संसद या किसी राज्य विधानसभा के किसी अधिनियम को असंवैधानिक या विधायी क्षमता से परे और अधिकारातीत घोषित कर सके।
6. योजनाओं एवं वार्षिक बजट प्रस्तावों को तैयार करने के लिये राष्ट्रीय न्यायिक परिषद एवं राज्यों की न्यायिक परिषदों का गठन किया जाना चाहिये।
7. उच्च न्यायालय एवं उच्चतम न्यायालय में किसी मामले की अंतिम सुनवाई के बाद अधिकतम 90 दिनों के अंदर उस मामले का अंतिम निर्णय कर दिया जाना चाहिये।
8. विधि के नियमों का उल्लंघन करने पर दोषियों को दंडित करने की व्यवस्था उपयुक्त न्यायालयों में ही होनी चाहिये।
9. प्रत्येक उच्च न्यायालय को मामलों की सुनवाई के लिये एक समयबद्ध सारणी बनानी चाहिये, जिससे एक निश्चित समय के भीतर मामलों का अंतिम रूप से निपटारा किया जा सके। किसी भी मामले को एक वर्ष से ज्यादा समय तक लंबित नहीं रखना चाहिये।
10. गैर-अपराधीकरण के भाग के रूप में याचिका की व्यवस्था की जानी चाहिये।
11. देश के निचले स्तर के न्यायालयों को उच्च न्यायालय के अधीन दो स्तरों का बनाया जाना चाहिये।

9. सामाजिक-आर्थिक परिवर्तनों एवं विकास की गति के बारे में

1. उच्च न्यायालयों एवं उच्चतम न्यायालय की खंडपीठों में अनुसूचित जाति, जनजाति एवं अन्य पिछड़ा वर्ग के लोगों के लिये पर्याप्त प्रतिनिधित्व की व्यवस्था की जानी चाहिये।
2. सामाजिक नीतियां ऐसी होनी चाहिये, जो अनुसूचित जाति, जनजाति एवं पिछड़े वर्गों का भला कर सके

तथा लड़कियों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए ताकि वे सामान्य वर्ग के साथ समान रूप से प्रतिस्पर्धा कर सकें।

3. यह सुनिश्चित करने के लिये कि समाज के कमजोर तबकों के लिये संसाधनों का युक्तियुक्त तरीके से उपयोग हो सके, नयी संस्थाओं की स्थापना की जानी चाहिये।
4. प्रत्येक सेवाप्रदाता विभाग/अधिकरण द्वारा ऐसे नागरिक चार्टर का निर्माण किया जाना चाहिये, जिससे अनुसूचित जाति, जनजाति एवं अन्य पिछड़ा वर्ग के लोगों के लिये कल्याण के काम किये जा सकें।
5. अनुसूचित जाति, जनजाति एवं अन्य पिछड़ा वर्ग के लोगों के लिये सरकारी सेवाओं में आरक्षण की उचित व्यवस्था होनी चाहिये तथा आरक्षण से संबंधित विवादों का समाधान करने के लिये आरक्षण न्याय अदालत का गठन किया जाना चाहिये।
6. देश के प्रत्येक जिले में अनुसूचित जाति, जनजाति एवं अन्य पिछड़ा वर्ग के बच्चों के लिये आवासीय स्कूलों की स्थापना की जानी चाहिये।
7. संविधान की पांचवी अनुसूची के अंतर्गत शासित सभी जनजातीय क्षेत्रों का प्रशासन छठी अनुसूची में हस्तांतरित कर दिया जाना चाहिये। छठी अनुसूची के अंतर्गत अन्य जनजातीय क्षेत्रों को भी लाया जाना चाहिये।
8. अनुसूचित जाति, जनजाति (उत्पीड़न से संरक्षण) अधिनियम, 1989 के अंतर्गत इन वर्गों के साथ होने वाले अत्याचारों को रोकने के लिये विशेष न्यायालय की स्थापना की जानी चाहिये।
9. अस्पृश्यता के अंत के लिए अन्य बातों के साथ-साथ सिविल अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 के अंतर्गत दण्डात्मक कार्यवाही को प्रभावी बनाए जाने की आवश्यकता है।
10. सफाई कर्मचारी नियोजन और शुष्क शौचालय सन्निर्माण (प्रतिषेध) अधिनियम, 1993 को कड़ाई से लागू किया जाए।
11. अल्पसंख्यक समुदाय के लोगों के कल्याण एवं उनकी शिक्षा आदि के लिये और ज्यादा ठोस कदम उठाये जाने चाहिये।
12. बंधुआ मजदूरों की मुक्ति एवं उन्हें रोजगार दिलाने के लिये एक राष्ट्रीय अधिकरण का गठन कर उसे व्यापक अधिकार दिये जाने चाहिये, राज्य स्तर पर भी इस प्रकार के अधिकरणों का गठन किया जाना चाहिये।
13. महिलाओं के विरुद्ध होने वाली हिंसा एवं उत्पीड़न को रोकने के लिये और कड़े नियम बनाये जाने चाहिये तथा उनकी शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य आदि के लिये ज्यादा सुविधाओं की व्यवस्था करनी चाहिये।

10. विकेंद्रीकरण (पंचायत एवं नगरपालिकायें) के बारे में

1. संविधान की ग्यारहवीं एवं बारहवीं अनुसूची को संशोधित करके इस प्रकार का स्वरूप दिया जाना चाहिये, जिससे देश में पंचायतों एवं नगरपालिकाओं हेतु पृथक राजकोष की स्थापना की जा सके।
2. सभी राज्यों में मुख्यमंत्री की अध्यक्षता में राज्य पंचायत परिषद का गठन किया जाना चाहिये।
3. पंचायतों एवं नगरपालिकाओं को स्पष्टतया 'स्व शासन की संस्थायें' के रूप में वर्गीकृत किया जाना चाहिये तथा उन्हें व्यापक शक्तियां दी जानी चाहिये। इस उद्देश्य के लिये अनुच्छेद 243-छ तथा 243-ब को संशोधित किया जाना चाहिये।
4. भारत के निर्वाचन आयोग को राज्य निर्वाचन आयोगों को उनके कार्यों के संबंध में दिशा-निर्देश जारी करने का अधिकार होना चाहिये। राज्य निर्वाचन आयोगों को अपना वार्षिक प्रतिवेदन या विशेष प्रतिवेदन भारत के निर्वाचन आयोग तथा राज्यपाल को सौंपना चाहिये। इस कार्य के लिये अनुच्छेद 243-ट तथा 243-यक। को संशोधित किया जाना चाहिये।
5. पंचायतों को विघटित करने से पहले उनका पक्ष सुनने के लिये अनुच्छेद 243-ड़ को संशोधित किया जाना चाहिये।
6. लेखा जांच के कार्यों में एकरूपता लाने के लिये भारत के नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक को यह अधिकार दिया जाना चाहिये कि वह पंचायतों की भी लेखा जांच कर सके या उनके लिए लेखा मालकों का निर्धारण कर सके।
7. जब किसी नगरपालिका को विघटित किया जाये तो राज्य विधानमंडल में इस आशय का प्रतिवेदन प्रस्तुत करना चाहिये कि उस नगरपालिका को विघटित करने का आधार क्या था?

8. स्थानीय संस्थाओं के प्रतिनिधियों के निर्वाचन से संबंधित सभी प्रकार की अहर्ताओं एवं गैर-अहर्ताओं को एक ही नियम द्वारा शासित किया जाना चाहिये।
9. सीटों का परिसीमन, आरक्षण एवं चक्रण से संबंधित कार्यों का दायित्व राज्य निर्वाचन आयोग के स्थान पर परिसीमन आयोग के पास होना चाहिये।
10. नगरपालिकाओं के लिए विशिष्ट और पृथक कर क्षेत्र अवधारणा को मान्यता दी जानी चाहिये।

11. उत्तर-पूर्वी भारत में संस्थाओं के बारे में

1. इस क्षेत्र के सभी राज्यों में संविधान के 73वें एवं 74वें संशोधन के अंतर्गत उपलब्ध अवसर लागू किए जाने चाहिए। हालांकि, ऐसा करते समय इन क्षेत्रों की विशेष संस्कृति एवं परंपराओं का ध्यान अवश्य रखा जाना चाहिये।
2. छठी अनुसूची के अंतर्गत आने वाले विषयों एवं ग्यारहवीं अनुसूची में उल्लिखत विषयों को स्वायत्त जिला परिषदों को सौंपा जा सकता है।
3. प्रशासन के परंपरागत रूप को स्व-प्रशासन से संबद्ध किया जाना चाहिये, जिससे कि इन क्षेत्रों में व्याप्त वतर्मान असंतोष को समाप्त किया जा सके।
4. नागरिकता अधिनियम द्वारा अवैध प्रवासन निर्धारण अधिनियम, विदेशी नागरिक अधिनियम तथा इसी प्रकार के अन्य अधिनियमों की जांच करने के लिये एक राष्ट्रीय प्रवासन परिषद का गठन किया जाना चाहिये।
5. नागालैंड में नागा परिषद के स्थान पर विभिन्न नागा समाज समूहों को मिलाकर जिला स्तर पर एक नयी संस्था का गठन किया जाना चाहिये।
6. असम के संबंध में, छठी अनुसूची का विस्तार बोडोलैंड स्वायत्त परिषद तक होना चाहिये तथा अन्य स्वायत्त परिषदों को स्वायत्त विकास परिषदों के रूप में उन्नत करना चाहिये।
7. मेघालय के संबंध में, ग्राम प्रशासन के स्तर को स्वायत्त जिला परिषदों के अंतर्गत ग्राम या ग्रामों के समूहों के रूप में उन्नत किया जाना चाहिये।
8. त्रिपुरा के संबंध में, स्वायत्त परिषदों के संबंध में किये गये परिवर्तनों को जिला स्वायत्त परिषदों पर भी लागू किया जाना चाहिये।
9. मिजोरम के संबंध में, उन क्षेत्रों में जिला स्तर पर मध्यस्थ निर्वाचित स्तरों का विकास किया जाना चाहिये, जो छठी अनुसूची के अंतर्गत नहीं आते हैं।
10. मणिपुर के संबंध में, छठी अनुसूची के उपबंधों को राज्य के पहाड़ी जिलों तक विस्तृत करना चाहिये।

12. निर्वाचन प्रक्रिया के बारे में

1. यदि कोई व्यक्ति, जिसे किसी अपराध के संबंध में पांच वर्ष या उससे अधिक का कारावास दिया जा चुका है, उसे संसद या राज्य विधानमंडल का चुनाव लड़ने के अयोग्य घोषित करना चाहिये।
2. यदि कोई व्यक्ति, जिसे किसी गंभीर अपराध जैसे-हत्या, बलात्कार, स्मगलिंग, डकैती आदि के लिये दंड दिया जा चुका है, उसे किसी भी राजनीतिक पद को प्राप्त करने के प्रतिबंधित घोषित कर देना चाहिये।
3. राजनीतिक नेताओं के विरुद्ध न्यायालय में लंबित आपराधिक मामलों का तेजी से निपटारा करना चाहिये तथा यदि आवश्यक हो तो इसके लिये विशेष न्यायालय की स्थापना भी की जा सकती है।
4. राजनीतिक याचिकाओं की सुनवाई भी विशेष न्यायालय द्वारा की जानी चाहिये। विकल्प के रूप में, उच्च न्यायालय में विशेष निवार्चित खंडपीठों का गठन किया जा सकता है और इन्हें राजनीतिक याचिकाओं एवं राजनीतिक विवादों का विशिष्ट कार्य सौंपा जा सकेगा।
5. राजनीतिक दलों को प्राप्त होने वाले धन के संबंध में उचित नियम बनाये जाने चाहिये, जिससे इन दलों को प्राप्त होने वाले धन के बारे में पूर्ण पारदर्शिता हो तथा यह स्पष्ट रूप से पता चल सके कि किसी राजनीतिक दल ने कहां से या किस व्यक्ति से यह धन प्राप्त किया। इसलिए बाह्य धन प्राप्ति को किसी विनियामक तंत्र की स्थापना तक प्रतिबंधित किया जाए।
6. एक ही पद के लिये उम्मीदवारों को एक से अधिक स्थान से चुनाव लड़ने पर रोक लगा देनी चाहिये।
7. चुनाव आचार संहिता का कड़ाई से पालन होना चाहिये तथा इसका उल्लंघन करने वालों को कड़ा दंड मिलना चाहिये।
8. निर्वाचन आयोग को यह देखना चाहिये कि किसी उम्मीदवार को जब 50 प्रतिशत से अधिक मत प्राप्त हों तभी उसे विजयी घोषित किया जाये। इसके लिये

आयोग उचित नियम-कानून बना सकता है। वास्तव में यह व्यवस्था उचित प्रतिनिधित्व के सिद्धांत का प्रतिनिधित्व करती है।

9. यदि कोई निर्दलीय उम्मीदवार यदि किसी चुनाव में लगातार तीन बार हार जाता है, जो उसे उस चुनाव को लड़ने के प्रतिबंधित घोषित कर देना चाहिये।
10. जमानत जब्त होने वाले वर्तमान के डाले गये वैध मतों के 16.67 प्रतिशत के नियम की सीमा को बढ़ाकर 25 प्रतिशत कर देना चाहिये।
11. भारत से बाहर जन्म लेने वाले किसी व्यक्ति या वे लोग, जिनके माता-पिता या दादा-दादी भारतीय नागरिक थे, जब देश में किसी उच्च पद, जैसे—राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, मुख्य न्यायाधीश आदि का पद धारण करें तो पहले उनके बारे में विस्तार से जांच करायी जाये।[10]
12. मुख्य निर्वाचन आयुक्त एवं अन्य निर्वाचन आयुक्तों की नियुक्ति एक आयोग की सिफारिश पर की जानी चाहिये, जिसमें प्रधानमंत्री, लोकसभा में विपक्ष का नेता, राज्यसभा में विपक्ष का नेता, लोकसभा अध्यक्ष एवं राज्यसभा का उप-सभापति शामिल हों। राज्य निर्वाचन आयुक्तों की नियुक्ति में भी इसी प्रकार की प्रक्रिया अपनायी जानी चाहिये।

13. राजनीतिक दलों के बारे में

1. राजनीतिक दलों का पंजीकरण एवं कार्य-प्रणाली तथा दलों के गठबंधन के बारे में विस्तृत नियम बनाये जाने चाहिये। इस प्रस्तावित नियम में:

(क) किसी भी राजनीतिक दल या गठबंधन के द्वार देश के प्रत्येक नागरिक के लिये खुले होने चाहिये तथा इसमें जाति, धर्म आदि के आधार पर किसी प्रकार की रोक नहीं होनी चाहिये।

(ख) रानजीतिक दलों के लिये यह अनिवार्य होना चाहिये कि वे अपने खातों का भली प्रकार से संचालन करें तथा उनकी समयानुसार जांच करायें।

(ग) राजनीतिक दलों के लिये यह अनिवार्य होना चाहिये कि वे अपने चुनाव लड़ने वाले कार्यकर्ताओं को यह निर्देश दें कि अपना पर्चा भरते समय वे अपनी संपत्ति का पूरा ब्यौरा दें।

(घ) यदि कोई व्यक्ति किसी न्यायालय से किसी आपराधिक मामले के लिये दंडित हो चुका है या न्यायालय ने उस पर किसी अपराध के लिये आरोप तय किया है तो राजनीतिक दलों को ऐसे व्यक्ति को किसी भी चुनाव में अपना उम्मीदवार नहीं बनाना चहिये।

(ड.) यदि कोई राजनीतिक दल उपरोक्त वर्णित उपबंधों का उल्लंघन करता है तो उस दल के उम्मीदवार को अयोग्य घोषित कर देना चाहिये तथा उस दल की मान्यता समाप्त कर देनी चाहिये।

2. निर्वाचन आयोग को राजनीतिक दलों को मान्यता देने के नियमों को कड़ा बनाना चाहिये, जिससे अत्यंत छोटे राजनीतिक दलों का गठन न हो सके।
3. राजनीतिक दलों को प्राप्त होने वाले चंदे एवं चुनाव के लिये अपने उम्मीदवारों को दिये जाने वाले धन के बारे एक विस्तृत नियम बनाया जाना चाहिये। इस नियम में निम्न उपबंध होने चाहिये:

(क) राजनीतिक दलों को प्राप्त होने वाले धन में पारदर्शिता होनी चाहिये।

(ख) औद्योगिक घरानों से प्राप्त होने वाले धन की एक सीमा होनी चाहिये।

(ग) एक सीमा से अधिक दान या चंदा देने पर कर लगाया जाना चाहिये।

(घ) चंदा देने वाले एवं प्राप्तकर्ता राजनीतिक दल दोनों की लेखाजांच होनी चाहिये।

(ड.) प्रत्येक राजनीतिक दल के लेखा जांच का विवरण प्रतिवर्ष प्रकाशित किया जाना चाहिये। तथा

(च) चुनावी खर्च में व्यय की गलत जानकारी देने वाले दल की मान्यता समाप्त कर देनी चाहिये।

14. परिवर्तन विरोधी कानून के बारे में

संविधान की दसवीं अनुसूची को संशोधित कर उसमें निम्न उपबंध किये जाने चाहिये:

1. वे सभी लोग (चाहे व्यक्तिगत या सामूहिक) जो परिवर्तन विरोधी कानून के आधार पर अयोग्य घोषित कर दिये गये हों, उन्हें अपने पद से त्यागपत्र दे देना चाहिये तथा नया चुनाव लड़ना चाहिये।
2. जिन लोगों को इस नियम के आधार पर अयोग्य घोषित कर दिया गया है, उन्हें किसी पद को धारण करने या मंत्री बनने के तब तक अयोग्य घोषित कर देना चाहिये, जब तक की उनका शेष कार्यकाल बचा

है या जब तक कि नया चुनाव नहीं हो जाता है।

3. इस प्रकार के लोगों द्वारा सरकार को गिराने के लिए दिये गये मत को अवैध माना जाना चाहिये।
4. किसी व्यक्ति को दल परिवर्तन विरोधी कानून के आधार पर अयोग्य घोषित करने की शक्ति सदन के अध्यक्ष या सभापति के स्थान पर देश के निर्वाचन आयोग को होनी चाहिये।

संदर्भ सूची

1. न्याय एवं विधि मंत्रालय (विधिक मामलों का विभाग) का 22 फरवरी, 2000 का संकल्प।
2. आयोग के अन्य सदस्य थे—बी.पी.जीवन रेड्डी (विधि आयोग के अध्यक्ष), आर.एस. सरकारिया (उच्चतम न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश), के. पुनैय्या (आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश), सोली सोराबजी (भारत के महान्यायवादी), के. पारासरन (भारत के पूर्व महान्यायवादी), सुभाष कश्यप (लोकसभा के पूर्व महासचिव), सी. आर. ईरानी (स्टेट्समैन समाचार-पत्र के मुख्य संपादक एवं प्रबंध संचालक), आबिद हुसैन (अमेरिका में भारत के पूर्व राजदूत), श्रीमति सुमित्रा कुलकर्णी (भूतपूर्व सांसद) एवं पी.ए. संगमा (लोकसभा के पूर्व अध्यक्ष)। आयोग द्वारा अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करने के तीन माह पहले पी.ए. संगमा ने आयोग की सदस्यता से त्यागपत्र दे दिया था।
3. आयोग को अपना कार्य एक वर्ष की अवधि के भीतर पूरा करके सिफारिशें देने को कहा गया था। तीन विस्तारों के बाद, आयोग ने मार्च, 2002 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। आयोग की रिपोर्ट सिफारिशों का एक विस्तृत संकलन है, जिसमें 1,979 पृष्ठ हैं तथा यह दो भागों में विभाजित है। भाग-1 में इसकी सिफारिशें तथा भाग-2 (पुस्तक 1, 2 और 3 में बंटा हुआ) में विस्तृत परामर्शी पत्र, पृष्ठभूमि पत्र, विचार-विमर्श का ब्यौरा और इसकी प्रारूप और संपादकीय समिति की रिपोर्ट का वर्णन है।
4. आयोग की रिपोर्ट, भाग-1, अध्याय-1
5. आयोग की रिपोर्ट, भाग-1, अध्याय-2
6. वही।
7. आयोग की रिपोर्ट के भाग-1 के अध्याय 3 से 10 में विस्तार से क्षेत्रवार सिफारिशें हैं। इन सिफारिशों का सारांश रिपोर्ट के अध्याय 11 में दिया गया है।
8. वर्तमान में ये नीति-निदेशक तत्व अनुच्छेद 39-क के अंतर्गत आते हैं।
9. भारत सरकार ने 'भारत के नागरिकों को मूल कर्तव्यों के बारे में शिक्षित करने के लिये उचित प्रयासों को सुझाने के लिये एक समिति' का गठन वर्ष 1998 में न्यायमूर्ति जे.एस. वर्मा की अध्यक्षता में किया था। इस समिति ने अपनी सिफारिशें अक्टूबर, 1999 में दी।
10. इस मामले पर आयोग में गहरे मतभेद उत्पन्न हो गये तथा पी.ए. संगमा ने आयोग की सदस्यता से त्यागपत्र दे दिया।